Be Mains Ready

drishtiias.com/hindi/be-mains-ready-daily-answer-writing-practice-question/papers/2019/be-mains-ready-day-50-hindi-literature-2-explanation/print

(क) कष्ट हृदय की कसौटी है, तपस्या अग्नि है। सम्राट यदि इतना भी न कर सके तो क्या सब क्षणिक सुखों का अंत है। जिसमें सुखों का अंत न हो, इसलिये सुख करना ही न चाहिये। मेरे जीवन के देवता और उस जीवन के प्राप्य क्षमा।

(ख) अधिकार-सुख कितना मादक और सारहीन है। अपने को नियामक और कर्त्ता समझने की बलवती स्पृहा उससे बेगार कराती है। उत्सवों में परिचारक और अस्त्रों में ढाल से भी- अधिकार लोलुप मनुष्य क्या अच्छे हैं? उंह। जो कुछ हो, हम साम्राज्य के एक सैनिक हैं।

(ग) भारत समग्र विश्व का है, और सम्पूर्ण वसुन्धरा इसके प्रेम-पाश में आबद्ध है। अनादि काल से ज्ञान की, मानवता की ज्योति यह विकीर्ण कर रहा है। वसुन्धरा का हृदय-भारत-किस मूर्ख को प्यारा नहीं है?

दृष्टिकोण / व्याख्या / उत्तर

(क)

संदर्भ: प्रस्तुत गद्यांश हिंदी नाट्येतिहास के शिखर-पुरुष जयशंकर प्रसाद द्वारा 1928 ई. में रचित प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक स्कंदगुप्त से लिया गया है।

प्रसंग: नाटक के अंतिम अंश से ली गई इन पंक्तियों में देवसेना स्कंदगुप्त से संवाद करते हुए विरह और वेदना को वास्तविक प्रेम की पहचान और उपलब्धि के रूप में प्रतिष्ठित कर रही है।

भावार्थ: देवसेना कह रही है कि प्रेम की वास्तविक पहचान की कसौटी विरह-वेदना है और प्रेमी से दूर रहते हुए उसके प्रति तीव्र अनुभूति से भरा हृदय ही अग्नि के समान प्रेम को प्रज्जवलित रखता है। वह स्कंदगुप्त से कहती है कि उन्हें भी प्रेम को इसी रूप में जीवित रखना चाहिये। वह सुखों को क्षणिक और नष्टवान बताते हुए उन्हें निरर्थक कहती है। वह स्कंदगुप्त से कहती है कि उनके प्रति उसका प्रेम शाश्वत है जो इस जन्म में भी है और अगले जन्मों में भी बना रहेगा।

विशेष:

(i) प्रस्तुत पंक्तियों में प्रसाद ने अपने आनंदवादी जीवन-दृष्टि को बहुत खूबसूरती से घुला दिया है जहाँ आनंद जीवन का लक्ष्य है और जो सुख और दुख दोनों से परे वह अवस्था है जहाँ जीवन के क्षणिक सुख और उत्तेजनाएँ शमिल हो जाती हैं और व्यक्ति आनंदमूलक शांति की अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

(ii) इन पंक्तियों में अभिव्यक्त देवसेना का प्रेम छायावादी संस्कारों से निर्मित आध्यात्मिक और त्यागमूलक प्रेम है। इसी कारण वह मिलन के सुख को क्षणिक और निम्नस्तरीय मानकर अस्वीकार कर देती है और मानसिक वेदना में ही प्रेम और जीवन की सार्थकता मानती है। छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा भी कहती हैं-

'मिलन का मत नाम लो, मैं विरह में चिर हूँ'

(iii) 'मेरे जीवन के देवता और उस जीवन के प्राप्य' संवाद संकेतित करता है कि प्रेम की अनुपलब्धि मात्र भोगमूलक भौतिकता के स्तर पर हुई है, आध्यात्मिक स्तर पर तो प्रेम उपलब्ध हुआ है।

(iv) इन पंक्तियों की भाषिक प्रकृति तत्समी है

(v) प्रथम पंक्ति सूत्र भाषा के प्रयोग का उत्कृष्ट नमूना है।

(vi) छोटे वाक्यों और विराम चिह्नों का उपयुक्त प्रयोग इन पंक्तियों को रंगमंचीय दृष्टि से प्राणवान बनाता है।

(vii) वर्तमान जीवन-स्थितियों में ये पंक्तियाँ प्रासंगिक है जहाँ उपभोक्तावादी मानसिकता में प्रेम देह-केंद्रित और भौतिकतावादी होता जा रहा है और अपना वास्तविक मानवीय अर्थ खोता जा रहा है।

(ख)

संदर्भ: प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी नाटयेतिहास के शिखर प्ररुष जयशंकर प्रसाद द्वारा 1928 ई. में रचित प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक स्कंदगुप्त से लिया गया है।

प्रसंग: ये पंक्तियाँ 'स्कंदगुप्त' नाटक की आरंभिक पंक्तियाँ हैं जो स्कंदगुप्त द्वारा एकालाप के रूप में कही गई हैं।

भावार्थ: इन पंक्तियों में स्कंदगुप्त सत्ता में निहित अधिकार भाव को अत्यधिक मादक बता रहा है। मादकता व्यक्ति को विवेकहीन बना देती है। उसके अनुसार इसी कारण व्यक्ति अधिकार-सत्ता की वास्तविकता को नहीं पहचान पाता। स्कंदगुप्त के अनुसार वास्तव में अधिकार-सुख निरर्थक होता है। किंतु, इसी निरर्थक सुख के लिये व्यक्ति लगातार प्रयत्नशील रहता है क्योंकि अधिकार एवं सत्ता के उन्माद में वह स्वयं को नियामक और कर्ता समझने लगता है। फिर स्कंदगुप्त अपने इस भाव को विराम देते हुए कहता है कि लेकिन साम्राज्य के एक सैनिक के रूप में अपने कर्त्तव्यों का निवर्हण उसका दायित्व हैं।

विशेष:

(i) ये पंक्तियाँ प्रसाद की उस जीवन-दृष्टि की ओर संकेत कर रही हैं जो केवल भौतिक सुखों की उपलब्धि में मानवीय जीवन को सार्थक नहीं मानता बल्कि अपनी सार्थकता की खोज अपने मूल व्यक्तित्व की उपलब्धि और समरसता की स्थिति में करता है।

(ii) इन पंक्तियों में नायक स्कंदगुप्त का अंतर्द्वन्द्व दिखाई देता है जिस पर स्वच्छंदतावादी नाट्यपरंपरा का प्रभाव लक्षित होता है।

(iii) 'अधिकार-सुख को मादक और सारहीन मानना' स्कंदगुप्त पर ट्रेजिक हीरो का प्रभाव दिखलाता है।

(iv) इन पंक्तियों में लक्षित किया जा सकता है कि राष्ट्रभक्ति स्कंदगुप्त दायित्व समझ कर निभाता है न कि वैयक्तिक प्रेरणा से।

(v) इन पंक्तियों की भाषा की मूल प्रकृति तत्समी है।

(vi) प्रथम पंक्ति सूत्रभाषा के प्रयोग का उत्कृष्ट उदाहरण है जो प्रसाद की भाषा की महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

(vii) ये पंक्तियाँ वर्तमान जीवन-संदर्भों में भी प्रासंगिक है जहाँ अधिकार और सत्ता की लिप्सा बढ़ती जा रही है। यह व्यक्ति में सुख का भ्रम तो पैदा करती है किंतु अपनी परिणति में अर्थहीन होती है।

(ग)

प्रस्तुत नाट्यांश प्रसाद द्वारा रचित नाटक 'स्कंदगुप्त' के चतुर्थ अंक से लिया गया है। इसमें प्रख्यातकीर्ति धातुसेन से पूछती है कि तुम्हें सिंहल राज्य की तुलना में भारत का भ्रमण करना क्यों अच्छा लगता है? इसके उत्तर में धातुसेन भारत की महानता का उद्घोष करता है।

धातुसेन कहता है कि भारत पृथ्वी का ह्रदय है और सारी पृथ्वी के लोग इसके प्रति लगाव रखते हैं। यह प्राचीन काल से ही ज्ञान और मानवता की भूमि रही हैं और इन्हें पूरे विश्व में पैलाती रही है।

प्रसाद की इन पंक्तियों में राष्ट्रीय चेतना व्यंजित होती हुई दिखायी देती है। जिसे देश के निवासियों में हीनता की भावना भर गई हो वहाँ विदेशी पात्रों द्वारा प्रशंसा करवाना मनोवैज्ञानिक स्तर पर राष्ट्रीय स्वाभिमान को विकसित करने का एक श्रेष्ठ प्रयत्न है।

इन पंक्तियों में तत्समी भाषा का कुशल एवं प्रभावशाली प्रयोग हुआ है। यह भाषा नाटक के ऐतिहासिक कथावस्तु के अनुरूप है।